कथकपुतली : समाज में एक स्थान बनाता नृत्य

डॉ0 विधि नागर
एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष नृत्य विभाग
संगीत एवं मंच कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
Email: vidhinagar@rediffmail.com

प्रस्तावना

कथकपुतली नृत्य, दो नृत्य शैलियों से प्रेरित है। उत्तर भारत की प्रमुख शास्त्रीय नृत्य शैली ''कथक'' तथा राजस्थान की लोक कला ''कथपुतली''। दोनों ही प्राचीन कलायें हैं जो भारत की सांस्कृतिक धरोहर होने के साथ–साथ बहुत ही लोकप्रिय हैं। ''कथकपुतली'' देखना एक ऐसा रोमांचक अद्भुत क्षण होता है, जिसमें कथक नृत्य करने वाली, स्फूर्ति से भरी नृत्यांगनायें काठ की कठपुतलियों में परिवर्तित हो जाती है, वह कथक नृत्य के सभी पहलुओं को कठपुतली रूप में दर्शाती हैं।

मुख्य शब्द– कथक, शास्त्रीय नृत्य, कठपुतली, राजस्थान, प्रयोग।

उद्देश्य– (अ) नवीन क्रियात्मक प्रयोग
(ब) कथकपुतली में कथक का स्थान
(स) कथकपुतली में कठपुतली का स्थान
(द) सामाजिक नृत्य

कठपुतली

कठपुतली का खेल अत्यंत प्राचीन नाटकीय खेल है, जो समस्त सभ्य संसार में प्रशांत महासागर के पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक व्यापक रूप में प्रचलित रहा है। यह खेल गुड़ियों अथवा पुतलियों (पुत्तलिकाओं) द्वारा खेला जाता है। गुड़ियों के नर–मादा रूपों द्वारा जीवन के अनेक प्रसंगों की विभिन्न विधियों से, इसमें अभिव्यक्ति की जाती है और जीवन को नाटकीय विधि से मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। 'कठपुतली' राजस्थानी भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है। 'कठ' का अर्थ होता है लकड़ी तथा 'पुतली' का अर्थ होता है 'गुड़िया'। 'कठपुतली' मतलब 'पूरी तरह लकड़ी से बनी हुई गुड़िया' जिसमें सूती कपड़ा और धातु के तार भी काम में आते हैं। कठपुतलियाँ या तो लकड़ी की होती हैं या पेरिस–प्लास्टर की फोम की, कपड़ों की या कागज़ की लुग्दी की। उसके शरीर के भाग इस प्रकार जोड़े जाते हैं कि उनसे बँधी डोर खींचने पर वे अलग–अलग हिल सकें।

अत्यन्त प्राचीनकाल से ही पुतली चालक अपने दल सहित पुतलियों का पिटारा लिए गांव–गांव घूमते और जनता जनार्दन को कठपुतलियों के नाना खेल दिखाकर अपनी आजीविका चलाते थे। खेल द्वारा मनोरंजन के साथ–साथ लोक शिक्षण, सामाजिक सरोकार, ऐतिहासिक घटना प्रसंग तथा सांस्कृतिक भाईचारे का संदेश भी आम लोगों को सहज ही मिल जाता है।

कठपुतलियों का इतिहास– कठपुतलियों का इतिहास बहुत पुराना है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में पाणिनी की अष्टाध्यायी के नटसूत्र में पुतुल नाटक का उल्लेख मिलता है। कुछ लोग कठपुतली के जन्म को लेकर पौराणिक आख्यान का ज़िक्र करते हैं कि शिवजी ने काठ की मूर्ति में प्रवेश कर पार्वती का मन बहलाकर इस कला की शुरूआत की थी। कहानी 'सिंहासन बत्तीसी' में भी विक्रमादित्य के सिंहासन की बत्तीस पुतलियों का उल्लेख है। बौद्व कथाएं, जातक कथाएं, हितोपदेश व पंचतंत्र आदि साहित्यों में पुतलियों की कथा भरी पड़ी है। सातवाहन काल में भारत से दक्षिण पूवी एशिया के देशों इंडोनेशिया, थाईलैंड, म्यांमार, जावा, श्रीलंका आदि में इसका विस्तार हुआ। आज यह कला चीन, रूस, रूमानिया, इंग्लैण्ड, चेकास्लोवाकिया, अमेरिका व जापान आदि देशों में पहुँच चुकी है। इन देशों में इस विधा का सम–सामयिक प्रयोग कर इसे बहुआयामी रूप प्रदान किया गया है। वहाँ कठपुतली मनोरंजन के अलावा शिक्षा, विज्ञापन आदि अनेक क्षेत्रों में इस्तेमाल किया जा रहा है।[1]

चित्र सं. 1: परंपरागत कठपुतली

कठपुतली नाटक की कथावस्तु– भारत में पारम्परिक नाटकों की कथावस्तु में पौराणिक साहित्य, लोककथाएँ, जातक कथाएँ और किंवदंतियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। पहल नागौंर के अमर सिंह राठौड़, पृथ्वीराज चौहान–संयोगिता, हीर–रांझा, लैला–मजनूं और शीरी–फरहाद की कथाएँ ही कठपुतली खेल में दिखाई जाती थीं, लेकिन अब सम–सामयिक विषयों, महिला शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, परिवार नियोजन के साथ–साथ हास्य–व्यंगय, ज्ञानवर्द्धक व अन्य मनोरंजक कार्यक्रम दिखाए जाने लगे हैं। कठपुतली नाच की हर किस्म में पार्श्व से उस इलाके का संगीत बजता है, जहाँ का वह नाच होता है। कठपुतली नचाने वाला गीत गाता है और संवाद बोलता है। इन्हें न केवल हस्तकौशल दिखाना पड़ता है, बल्कि अच्छा गायक व संवाद अदाकार भी बनना पड़ता है। रीति–रिवाजों पर आधारित कठपुतली के प्रदर्शन में भी काफी बदलाव आ गया है। छोटे–छोटे लकड़ी के टुकड़ों, रंग–बिरंगे कपड़ों पर गोटे और बारीक काम से बनी कठपुतलियां हर किसी को मुग्ध कर लेती है। कठपुतली के खेल में हर प्रांत के मुताबिक भाषा, पहनावा व क्षेत्र की सम्पूर्ण लोक संस्कृति को अपने में समेटे रहते हैं। राजा–रजवाड़ों के संरक्षण में फली–फूली इस लोक कला का अंग्रेजी शासनकाल में विकास रूक गया। चूंकि इस कला को जीवित रखने वाले कलाकार नट, भाट, जोगी समाज के दलित वर्ग के थे, इसलिए समाज का तथाकथित उच्च कुलीन वर्ग इसे हेय दृष्टि से देखता था।

कठपुतलियों के प्रकार – कठपुतलियाँ मुख्य रूप से चार तरह की होती हैं। जैसे– दस्ताने की सहायता से नचाई जाने वाली, धागे से बांध कर नचाने वाली कठपुतलियाँ और छाया कठपुतलियाँ। दस्ताने पहनकर कठपुतली नचाने का पूरा श्रेय कलाकारों के हाथों पर होता है। उंगलियों पर बेहतरीन नियंत्रण उनके प्रदर्शन (परफॉरमेंस) में जान डाल देता है। छड़ की मदद से कठपुतलियों को नचाना आसान नहीं। हमारे

[1] कठपुतलियों का कलात्मक संसार–लोक संस्कृति से वैश्विक संस्कृति तक, संतोष कुमार।

यहां धागे वाली कठपुतलियों की कला काफी प्रचलित है। जोड़ों पर जगह–जगह धागे बांधकर कठपुतलियों को नचाने वाले कलाकारों का पूरा प्रदर्शन (परफॉरमेंस) संतुलन पर टिका होता है।

भारत के विभिन्न प्रदेशों में कठपुतलियों के रूप – राजस्थान की कठपुतली कला अत्यन्त प्राचीन एवं लोकप्रिय कला है। यह लोककला राजस्थान के नागौर तथा मारवाड़ जिले के भट् आदिवासी जाति के लोगों का पारंपरिक व्यवसाय भी है। कठपुतलियों को तार के माध्यम से उंगलियों पर नचाया जाता है। खाट के माध्यम से एक मंच तैयार किया जाता है, जिस पर तख्त लगाया जाता है। कठपुतली को डोरी के जरिये बांधा जाता है जो ऊपर से गुजरती है और उसका एक छोर कठपुतली कलाकारों के हाथ में होता है। राजस्थान का कोई भी मेला, धार्मिक त्योहार या सामाजिक मेल–जोल कठपुतली नाच के बिना अधूरा है। कठपुतली नाच की शुरूआत ढोलक की थाप से प्रारम्भ होता है तथा साथ हीं सारंगी, मोरचंग, हारमोनियम का भी प्रयोग होता है एवं आमतौर पर महिला मंडली की ओर से कथा के माध्यम से सुनायी जाती है। कठपुतली नाच राजस्थान में अलग–अलग विषयों पर आधारित होता है। इनमें नागौर के अमरसिंह राठौर का संवाद काफी लोकप्रिय है। राजस्थान में कठपुतली नाच न केवल मनोरंजन का स्रोत है, बल्कि इन लोक कला के माध्यम से नैतिक और सामाजिक शिक्षा का प्रचार–प्रसार भी होता है तथा सामाजिक मुद्दों और कुरीतियों को उजागर किया जाता है।

उत्तर प्रदेश में तो सबसे पहले कठपुतलियों के माध्यम का प्रयोग शुरू हुआ था। प्राचीन काल में राजा महाराजाओं की कथाओं, धार्मिक, पौराणिक आख्यानों और राजनीतिक व्यंग्यों को प्रस्तुत करने के लिये किया जाता था। उत्तर प्रदेश से धीरे–धीरे इस कला का प्रसार दक्षिण भारत के साथ ही देश के अन्य भागों में भी हुआ।

आन्ध्र प्रदेश की छाया पुतली चमड़े की बनी होती है, कहा जाता है कि ईसा से तीन शताब्दी पूर्व आंध्र के सातवाहन सम्राटों के राज्यकाल में इस शैली की पुतलियों का राजदरबार में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान था। उस समय सम्पूर्ण आंध्र एवं पश्चिमी तटीय प्रदेश में इन पुतलियों के कार्यक्रमों की धूम थी वहीं से ये पुतलियां समुद्री मार्ग से अन्यत्र फैलीं। जावा, सुमात्रा, मलेशिया, बर्मा, इण्डोनेशिया, वियतनाम, जापान आदि देशों की पुतलियों पर आंध्र की पुतलियों का प्रभाव माना जाता है।

पश्चिम बंगाल का पुतल नाच डंडें की सहायता से नचाई जाने वाली कठपुतली का नाच है। एक बड़ी सी कठपुतली नचाने वाले की कमर से बंधे खंभे से बांधी जाती है और वह पर्दे के पीछे रहकर डंडों की सहायता से उसे नचाता है। उड़िसा के कथिकुधेई नाच में कठपुतलियाँ छोटी होती हैं और नचाने वाला धागे और डंडे की सहायता से उन्हें नचाता है।

उड़ीसा का साखी कुंदेई, आसाम का पुतला नाच, महाराष्ट्र का मालासूत्री बहुली और कर्नाटक की गोम्बेयेट्टा धागे से नचाई जाने वाली कठपुतलियों के रूप हैं। तमिलनाडु की बोम्मलट्टम काफी कौशल वाली कला है, जिसमें बड़ी–बड़ी कठपुतलियाँ धागों और डंडों की सहायता से नचाई जाती है। तमिलनाडु की बोम्मलट्टम पुतली परम्परा भी राजस्थान की पुतलीशैली से मिलती जुलती है। इस पुतली द्वारा भरतनाट्यम जैसा नृत्य भी प्रर्दशन किया जाता है। यही कला आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में भी पाई जाती है। जानवरों की खाल से बनी, खूबसूरती से रंगी गई और सजावटी तौर पर छिद्रित छाया कठपुतलियाँ आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा और केरल में काफी लोकप्रिय हैं। उनमें कई जोड़ होते हैं, जिनकी सहायता से उन्हें नचाया जाता है।

केरल के तोलपवकूथु और आंध्र प्रदेश के थोलु बोमलता में मुख्यतः पौराणिक कथाएँ ही दर्शायी जाती हैं, जबकि कर्नाटक के तोगलु गोम्बे अट्टा में धर्मेतर विषय एवं चरित्र भी शामिल किए जाते हैं। दस्ताने वाली कठपुतलियाँ नचाने वाला दर्शकों के सामने बैठकर ही उन्हें नचाता है। इस किस्म की कठपुतली का नृत्य केरल का पावकथकलि है। उड़ीसा का कुंधेइनाच भी ऐसा ही है।

कठपुतलियों की रूप सज्जा और बनावट – राजस्थानी कठपुतली काठ के सिर वाली, बिना पांव की वह गुड़िया, जो अपने गोल–चपटे चेहरे लम्बी मोटी आंखें, उभरे–ऊंचे कान, फूले हुए नथुने, लटके–खुले होंठ तथा चपटी–चौड़ी कनपटी लिए रंगबिरंगी वेशभूषा में अपनी रूढ़िगत रूपसज्जा एवं आकार–प्रकार के साथ लचक लिए होती है। इन पुतलियों में 'राजापुतली' तनिक लम्बा झग्गा/चोंगा पहने होती है। यह झग्गा रूपहली, चौड़ी तथा पतली कौर से सजा होता है। झग्गे के नीचे मोतिया रहता है। इस पुतली के एक हाथ में तलवार तथा दूसरे में ढाल रहती है। यह पुतली चौदह से सोलह इंच तक लम्बी होती है, अन्य पुतलियाँ आठ से दस इंच तक लम्बी होती है। कठपुतली नचाने वाला सूत्रधार अपने मुंह में एक विशेष प्रकार की चहचहाट की ध्वनि देने वाली सीटी रखता है, जो कठपुतलियों की बोली का आभास कराती है। इसे ढोलक बजाने वाली महिला अपनी बोली में उलझाकर दर्शकों को कठपुतलियों के संवाद से रू–ब–रू कराती है।

कठपुतली शिक्षणरत संस्थाएँ–

- संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली।
- भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर।
- महिपत कवि, अहमदाबाद।
- यूनियन इंटरनेशनल डी ला मेरियनेट (यूनिमा) कोलकाता।
- जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

कठपुतली नचाना एक कला है जिसमें कलाकार निष्क्रिय कठपुतली को सक्रियता प्रदान करता है जिससे यह भ्रम उत्पन्न होता है कि वह जीवित है। लोगों को आज शिक्षा देने में कठपुतली कला के महत्व को कोई भी नज़रअंदाज नहीं कर सकता है। कठपुतली कला चाहे परम्परागत हो या आधुनिक इस कला का उपयोग जन शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता लाने के लिए किया जाता है। कठपुतली कला जटिल से जटिल विषय को आसानी से समझाने में सबसे उपयोगी माध्यम साबित हो रही है क्योंकि यह जीवन की समस्याओं को बेहतर ढंग से उजागर कर सकती है।[2]

कथक नृत्य

कथक–उत्तर भारत की प्रसिद्ध शास्त्रीय नृत्य शैली के रूप में 'कथक नृत्य' विश्व विख्यात है। सभी विद्वानों में इसके जन्म को लेकर विभिन्न मत हैं, परन्तु यह निश्चित है कि कथक मंदिरों का नृत्य है तथा यह एक प्राचीन नृत्य शैली है।

[2] कठपुतलियों का कलात्मक संसार–लोक संस्कृति से वैश्विक संस्कृति तक, संतोष कुमार।

कथक शब्द का प्रयोग प्राचीन महाकाव्यों में प्राप्त होता है। कथक एक एकल नृत्य है, परन्तु अभिनव प्रयोगों के इस दौर में नृत्य नाटिकायें तथा समूह में भी नृत्य होने लगे हैं। भारत में मुस्लिम आक्रमणकारियों के आने से कथक नृत्य पर भी उसकी गहरी छाप पड़ी। नृत्य शैली में पतन भी आया परन्तु कथक नृत्य को महान गुरूओं जैसे ठाकुर प्रसाद जी, कालका–बिन्दादीन जी, दुर्गाप्रसाद जी इत्यादि ने बहुत परिश्रम द्वारा तथा अथक प्रयासों द्वारा समाज में सम्माननीय स्थान दिलवाया।

कथक नृत्य क्रम में नर्तक सबसे पहले मंच पर 'थाट' बाँधता है फिर सलामी तथा आमद जो कि नृत्य वर्णों की रचना होती है करता है फिर टुकड़े, चक्रदार, परन, प्रिमलू, कवित्त इत्यादि करता है। यह सब नृत्त पक्ष के अन्तर्गत आता है। इसके बाद गत तथा भाव में ठुमरी, भजन इत्यादि करता है जो अत्यन्त दर्शनीय होती है। ठुमरी को गाकर नृत्य करना इसकी विशेषता है। एक पंक्ति को अनेक प्रकार से नृत्य करके दिखाया जाता है। सम्पूर्ण नृत्य में श्रृंगार रस का वर्चस्व होता है तथा अन्य रस सहारा लेकर यथा स्थान प्रकट किये जाते हैं। कथक नृत्य में पद संचालन का विशेष रूप से सराहनीय प्रदर्शन होता है। कठिन तालों में द्रुतगामी पदाघात आश्चर्यचकित कर देते हैं।

Image: Copy Right Reserved

कृष्ण–राधा पर छेड़छाड़, होली, विरह, नायिका, नायक भेद इत्यादि पर भाव दिखाया जाता है।

कथक नृत्य में नृत्त, नृत्य, नाट्य तीनों पक्षों का दुर्लभ संगम द्रष्टव्य है। ताण्डव की तेजी तथा लास्य की कोमलता दोनों को इस नृत्य शैली ने समेटा हुआ है। कथक के दो घराने प्रसिद्ध हैं– लखनऊ तथा जयपुर घराना।

कथक नृत्य में संगत पर तबला, पखावज, सारंगी या हारमोनियम होता है। वर्तमान में आवश्यकतानुसार बांसुरी, वायलिन इत्यादि का भी प्रयोग हो रहा है। कथक वेशभूषा दो प्रकार की है मुगलकालीन तथा परम्परागत वेशभूषा। मुगलकालीन वेशभूषा पूरी बाँह की लम्बी फ्राक, चूड़ीदार, कोटी, टोपी। पुरूष नर्तक चूड़ीदार, अंगरखा, दुपट्टा, टोपी पहनते हैं। परम्परागत वेशभूषा में लहंगा, ब्लाउज़, चुन्नी होती है। आभूषणों से युक्त नर्तकी दर्शनीय लगती है। घुंघरूओं का विशेष स्थान है प्रायः एक पाँव में दो–दो सौ घुंघरू बाँधे जाते हैं।

वर्तमान युग में कथक नृत्य अग्रणी नृत्य शैलियों में से एक है। आज हजारों की संख्या में नर्तक अपने देश में हीं नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व में कथक नृत्य का प्रदर्शन कर उसे लोकप्रिय बना रहे हैं। एक ओर जहाँ क्रियात्मक गुणवत्ता बढ़ी है वहीं दूसरी ओर सैद्धान्तिक पक्ष भी सुदृढ़ किया जा रहा है।[3]

[3] कथक नर्तन, विधि नागर।

कथकपुतली

कठपुतलियॉ मुझे बचपन से ही रिझातीं थीं, उनका नृत्य किसी काल्पनिक लोक में ले जाता था, उछलते हुये गुड्डे–गुड्डी, राजा–रानी, या लिल्ली घोड़ी। उनका नृत्य हमेशा जीवंत प्रतीत होता था। कठपुतलियॉ काठ अर्थात् लकड़ी से बनी होतीं है, लकड़ी से निर्मित स्त्री या पुरूष पात्रों के मुखमण्डल पर विभिन्न भावों का अभाव होता है, स्थायी रस श्रृंगार की बाहुलता रहती है, परन्तु कठपुलियॉ नचाने वाले का कला–कौशल इतना प्रभावशाली होता है कि वह

Image: Copy Right Reserved

काठ की पुतलियों में जान डाल देता है। राजस्थान की यह कला विश्व में प्रसिद्ध है जो न सिर्फ बच्चों वरन् प्रत्येक वर्ग के प्राणी के चेहरे पर मुस्कान लाने में सक्षम है। प्रमुखतः मेलों, महत्सवों तथा राजस्थान भ्रमण में सड़क किनारे 'कठपुतली का नाच' प्रायः देखने को मिल जाता है। मन के किसी कोने में बहुत समय पहले यह कौतूहल जागा कि यदि कठपुतलियॉ 'कथक' करने लगे तो कैसा मजा आयेगा ? वह कैसी दिखेंगी ? जब से मैनें अध्यापन कार्य प्रारंभ किया तब धीरे–धीरे आभास हुआ कि मैं भी तो कठपुतलियॉ ही तो नचा रही हूँ। अभ्यास के समय जैसे हाथ मोड़ते है, ये विद्यार्थी भी मोड़ते है, जैसे घूमना बताओं वैसे ही घूमते है, जैसे चलाओं वो चलते है आदि परन्तु कथक तो भाव प्रधान नृत्य है। भावों के अभाव में नृत्य कैसा? भला कठपुतलियों के चेहरे पर भाव कहॉ से लाया जाये। शनै–शनै चिन्तन–मनन चलता रहा और वह 'कथकपुतली' के रूप मे नृत्य जगत में आया।

कठपुतलियॉ यदि कथक नृत्य के तोड़े–टुकड़े, आमद, प्रिमेलु, परन करेंगी तो कैसा लगेगा ? इस जिज्ञासा ने यह प्रस्तुति करवायी। अभिनव प्रयोगों के इस दौर में कथक के मुख्य स्वरूप को बचाते हुये सार्थक तथा मनोरंजक प्रयोग आवश्यक भी है। कथकपुतली उन्हीं प्रयोगों में से एक है जिसे शास्त्रीय, लोक तथा कलारंजकों द्वारा पसंद किया गया। इसकी लगभग राष्ट्रीय, अन्तराष्ट्रीय स्तर पर 30 प्रस्तुतियां हो चुकी है। जिनमें प्रमुख रूप से –

Image: Copy Riht Reserved

- International Choreography Festival, Kolkatta
- ICCR, GOA
- उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ।

- जयपुर कथक केन्द्र, जयपुर।
- वार्षिक संगीत समारोह, प्रयाग संगीत समीति प्रयागराज।
- पूर्वाचार्य संगीत समारोह, वाराणसी।
- सोपान महोत्सव, मुम्बई।
- उत्सव, नई दिल्ली।

उपरोक्त महोत्सव शामिल है। दर्शकों द्वारा कथकपुतली को अत्यन्त पसंद किया गया जिसने कलाकारों को इस क्षेत्र में नित नये प्रयोग के लिए प्रोत्साहित किया एवं भविष्य में यह प्रयोग समस्त संगीत जगत से लगाव रखने वाले रसिकों को पसन्द आयेगा।

निष्कर्ष–

कठपुतली और कथक का उद्भव परस्पर राजस्थान से ही हुआ है। प्रमुख रूप से कथक में कथा वाचन, नृत्य तथा अभिनय की बहुलता है तथा दूसरी ओर कठपुतली में अभिनय का अभाव।

(क) कथकपुतली में जीवंत कठपुतलियां कथक नृत्य के सभी नृत्त पक्षों पर (थाट, आमद, टुकड़ा, परन, परमेलु, तिहाई, जुगलबन्दि, गत) नृत्य करती हैं।

(ख) कथक नृत्य में अभिनय, नृत्य का एक स्तम्भ है परन्तु उस अभिनय (कथक) को दिखा पाने में क्षमता कठपुतलियों का चेहरा लगा लेने से नर्तकियों द्वारा सम्भव नहीं है।

(ग) कथकपुतली में जीवंत कठपुतलियां कथक नृत्य के अभिनय पक्ष में गतभाव पर नृत्य करतीं हैं।

(घ) कथकपुतलियां में गत भाव आंगिक अभिनय द्वारा गत भाव से दर्शकों तक भाव सम्प्रेषित करती हैं।

(ड़) कथक और कठपुतली की परम्परागत् वेशभूषा में समानता है। (लहंगा, ब्लाउज़, दुपट्टा)

(च) कथकपुतलियों की वेशभूषा में (लहंगा, ब्लाउज़, दुपट्टा) एवं मुखौटा है।

(छ) कथक और कठपुतली के परम्परागत् वाद्यों में समानता है। (सारंगी, हारमोनियम, तबला, बांसुरी)

(ज) कथकपुतली के वाद्यों में है। (सारंगी, हारमोनियम, तबला, ढोलक, बांसुरी)

संदर्भ –

1. कठपुतलियों का कलात्मक संसार–लोक संस्कृति से वैश्विक संस्कृति तक, संतोष कुमार, भारत की लोक संस्कृति : परम्परा एवं प्रतिबिम्ब कार्यवृत्त 2012, नृत्य विभाग, संगीत एवं मंच कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
2. कथक नर्तन, विधि नागर। बी 0 आर 0 रिदम्स्, नई दिल्ली। 1999
3. लखनऊ का कथक घराना, विधि नागर, हिन्दी वांगमय लखनऊ 2010
4. पारम्परिक लोक कला एवं लोक संस्कृति– कमलेश माथुर
5. लुप्त होती कथपुतली कला, फिरदौस खान।
6. नाच री कथपुतली, हेमन्त कुमार।
7. चित्र सं. 1 https://www.jagran.com/elections/uttarakhand-puppet-will-help-to-aware-in-uttarakhand-election-15456871.html (Retrieved on 11.07.2019)